लघु पंच परमेष्ठी विधान

रचयिता

राजमल पवैया

प्रकाशक

A{Ib ^maVr` O¡Z `wdm \¡$S>aoeZ

E-4, ~mnyZJa, O`nwa – 302015

\$moZ : 0141–2707458, 2705581

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रथम संस्करण – १ हजार
१५ जनवरी २०१६
(मकर संक्रांति)

मूल्य – १० रुपये

मुद्रक :
सन् एन सन् प्रेस
तिलक नगर, जयपुर

प्रकाशकीय

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के माध्यम से पंचपरमेष्ठी विधान का यह लघु संस्करण प्रकाशित करते हुये हमें हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। वैसे तो इस विधान का वृहत् रूप पूर्व से ही प्रकाशित है; परन्तु समाज की मांग को देखते हुये श्री पवैयाजी से इसका लघु रूप तैयार करने का आग्रह किया गया था, जिसे उन्होंने स्वीकार कर हमें अल्पसमय में ही उपलब्ध करा दिया। इसके लिये हम सदैव उनके आभारी रहेंगे।

पंचपरमेष्ठी भगवन्त जिनशासन में शाश्वत आराध्य हैं। उनकी वंदना में समर्पित णमोकार महामंत्र जैन समाज के रोम-रोम में बसा हुआ है। पंच परमेष्ठी की वंदना एवं उनके स्वरूप प्रतिपादन में अनेक रचनायें उपलब्ध हैं, जिनमें कविवर टेकचंदजी कृत पंचपरमेष्ठी विधान सर्वाधिक प्रचलित है। स्व. पवैयाजी ने भी पंचपरमेष्ठी भगवन्तों की भक्ति से प्रेरित होकर इस विधान की रचना की है।

स्व. राजमलजी पवैया ने शताधिक विधानों की रचनाकर उन्हें आध्यात्मिक रस से सराबोर किया है, उनके इस उपकार को भुलाया नहीं जा सकता। इस कृति के माध्यम से हम सभी पंच परमेष्ठी भगवन्तों का स्वरूप समझकर उनके बताये मार्ग पर चलकर आत्मकल्याण करें – यही भावना है।

– परमात्मप्रकाश भारिल्ल (महामंत्री)

श्री पंच परमेष्ठी विधान

मंगलाचरण

(गीतिका)

**विमलगुण छ्यालीस धारी आप ही अरहंत हो।
दोष अष्टादश रहित प्रभु आप ही भगवंत हो।।
द्रव्य-गुण-पर्याय से मैं जान लूँ प्रभु आपको।
तो मैं सहज ही नाश कर दूँगा सकल भव-ताप को।।**

**गुण अनंतानंत वंदित अष्ट गुणपति को नमन।
ध्रुव अचल अनुपम स्वगतिमय सर्व सिद्धों को नमन।।
अष्ट कर्म विनाश कर प्रभु हो गए तारन-तरण।
दो मुझे आशीष हे प्रभु! क्षय करूँ मोहावरण।।**

**मूलगुण छत्तीस पालक संघ के आचार्य हैं।
षडावश्यक धर्म तप आचार गुप्ति प्रकार्य हैं।।
दान देते भगवती दीक्षा महान सुपात्र को।
है नमन मेरा तुम्हें गुरु जान लूँ चिन्मात्र को।।**

**दिव्य गुण पच्चीस धारी उपाध्यायों को नमन।
भावश्रुत का ज्ञान करके कर रहे निज का मनन।।
पठन-पाठन में सदा रत ध्यान करते अष्ट याम।
आपके चरणारविंदों में सतत मेरा प्रणाम।।**

**साधु मुनि निर्ग्रन्थ अट्ठाईस गुणधारी प्रभो।
मुक्ति के पथ पर अडिग आरूढ़ अधिकारी प्रभो।।
आपके पथ पर चलूँ मैं जमी उर में भावना।
दोष सारे ही विनाशूँ सफल हो यह साधना।।**

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री अरहंत परमेष्ठी पूजन

स्थापना

(वीरछंद)

अरहंतों की करूँ वन्दना भक्ति–भाव से करूँ प्रणाम।
शुद्ध स्वरूप आश्रय द्वारा शिवपुर में पाऊँ विश्राम।।
सर्वप्रथम दर्शन विशुद्धि भावना हृदय में लाऊँ नाथ।
सोलह कारण भव्य भावनाओं का छोडूँ कभी न साथ।।
इसीलिए प्रभु अष्ट द्रव्य से पूजन करने आया हूँ।
रत्नत्रय की परम भक्ति पा भवदु:ख हरने आया हूँ।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दर्शविशुद्धि भावना जल से किया आत्मा का अभिषेक।
विनय भावना से जन्मादिक त्रिविध रोग नाशे प्रत्येक।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शील महाव्रत पालन करके निज चंदन पाया अनमोल।
हो अभीक्षण ज्ञानोपयोगमय भवाताप क्षय किया अडोल।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्य: संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दृढ़ संवेग भाना भायी किया स्व अक्षय पद उत्पन्न।
शक्तिपूर्वक त्याग सुहाया ध्रुव स्वभाव वैभव सम्पन्न।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शक्तिपूर्वक तप से कर दीं कामवासनायें विध्वंस।
साधु समाधि भावना भायी दोष अनंग किया निर्वंश।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

वैयावृत्ति भावनापूर्वक भव अतृप्ति का रोग विनाश।
अर्हद्भक्ति अपूर्व सुहाई क्षुधारोग पूरा कर नाश।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्यों की भक्ति–भावना से कर मोह भ्रान्ति अवसान।
बहुश्रुतभक्ति भावना द्वारा पाया अनुपम केवलज्ञान।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रवचन भक्ति भावना द्वारा कर्म प्रकृतियाँ लीं सब जान।
आवश्यक परिहाणि भावना द्वारा कर्म किये अवसान।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म–मार्ग की कर प्रभावना पाया मोक्ष सुफल शिवरूप।
वात्सल्य भावना प्राप्त कर पाया सिद्ध स्वपद अनुरूप।।
अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलह कारण भव्य भावनाओं का अर्घ्य हुआ साकार।
पद अनर्घ्य अविनाशी पाया अजर अमर अविकल अविकार।।

अरहंतों को द्रव्य और गुण पर्यायों से लूँ मैं जान।
मोह–क्षोभ से रहित बनूँ प्रभु मैं भी हूँ अरहंत समान।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहंत परमेष्ठी के 46 गुण सम्बन्धी अर्घ्य

(जन्म के दस अतिशय सम्बन्धी अर्घ्य)

(दोहा)

श्री जिनराज महान का, स्वेद रहित तन जान।
श्रम कण बिन्दु विहीन हैं, धारी तीनों ज्ञान।।

ॐ ह्रीं श्री स्वेदरहितातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल–मूत्रादि विहीन है, जिनवर प्रभु की देह।
होता नहीं निहार कभी, प्रभु के नि:संदेह।।

ॐ ह्रीं श्री मलरहितातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर प्रभु की देह का, रक्त दूध–सम जान।
करुणा से प्लावित हृदय, दया दान युत मान।।

ॐ ह्रीं श्री श्वेतवर्णशोणितातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिन तन का संहनन, वज्रवृषभ नाराच।
कर्म नाश की योग्यता, इसमें रही सु नाच।।

ॐ ह्रीं श्री वज्रवृषभनाराचसंहननातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समचतुरस्र संस्थान से, शोभित देह महान।
वीतराग सर्वज्ञ हो, पायेंगे निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्री समचतुरस्रसंस्थानातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवन में विख्यात है, अतिशय सुंदर रूप।
कामदेव लज्जित हुए, लख जिनवर का रूप।।

ॐ ह्रीं श्री महारूपातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्षण जिनवर देह में, एक शतक वसु जान।
नौ सौ उपलक्षण सहित, तीर्थंकर भगवान।।

ॐ ह्रीं श्री शुभलक्षणातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुगन्धित देह है, गुण असंख्य भरपूर।
पाप–पुण्य दुर्गन्ध को, शीघ्र करेंगे दूर।।

ॐ ह्रीं श्री सुगन्धितशरीरातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बल अनंत के हो धनी, पूर्ण बली जिनराज।
इन्द्रादिक बल अल्प अति, तुम सन्मुख महाराज।।

ॐ ह्रीं श्री अतुबलातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मधुर वचन जिनराज के, अतिशय मिष्ट प्रधान।
मात–पितादिक सभी को, होता हर्ष महान।।

ॐ ह्रीं श्री मधुरवचनातिशयसहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान के दस अतिशय सम्बन्धी अर्घ्य

(चान्द्रायण)

सौ–सौ योजन तक दुर्भिक्ष न देखिए, सौ–सौ योजन तक सुभिक्ष ही पेखिए।
हैं उपसर्ग परीषह रहित जिनेन्द्र प्रभु, बाधाओं का नाम मिटा स्वयमेव प्रभु।।

ॐ ह्रीं श्री शतयोजनदुर्भिक्षनिवारकोपसर्गरहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतरिक्ष आकाशगमन जिनराज का, बिन इच्छा होता है श्री महाराज का।
मोहनींद को जीत चुके जिनदेवजी, कवलाहार रहित होते स्वयमेवजी।।

ॐ ह्रीं श्री आकाशगमनसहित–कवलाहाररहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में चारों ओर प्रमोद से, भव्यजीव दर्शन करते अति मोद से।
अदयाभाव अभाव आपका जानकर, सभी जीव पाते शिवपथ भवताप हर।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्मुखविराजमान–अदयाभावरहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु शरीर की छाया भी पड़ती नहीं, रूप देख प्रभु तृप्ति कभी होती नहीं।
सर्वसकल विद्याओं के अधिराज हो, इसीलिए विद्यापति श्री जिनराज हो।।

ॐ ह्रीं श्री छायारहित–सकलविद्यापत्यरहन्तपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पलक नेत्र के नहीं झपकते हैं कभी, हैं टिमकार विहीन तीर्थंकर सभी।
केश तथा नाखून न बढ़ते हैं कभी, बस ज्यों के त्यों रहते हैं सुन्दर सभी।।

ॐ ह्रीं श्री नेत्रचपलतारहित–नखकेशवृद्धिरहित–अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवकृत चौदह अतिशय सम्बन्धी अर्घ्य

(सोरठा)

जिनध्वनि श्री जिनदेव, अर्धमागधी सातिशय।
निज निज भाषा माँहिं, नर-सुर-पशु सब समझते।।

ॐ ह्रीं श्री अर्धमागधीभाषासहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैरभाव को भूल, जाति विरोधी जीव भी।
मैत्री भाव प्रसिद्ध, सब जीवों में जानिए।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वजीवमैत्रीभावयुत-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् ऋतु के फल फूल, पुष्पलता फलते सभी।
यह अतिशय जिनदेव, सबको ही सुखकार है।।

ॐ ह्रीं श्री षडर्तुफलपुष्पातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्पणवत् यह भूमि, हो जाती रमणीय अति।
पृथ्वी स्वच्छ विशाल, देव बनाते हर्ष से।

ॐ ह्रीं श्री दर्पणसमभूम्यतिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों दिशि में वायु, बहती मलय सुगंध युत।
सब ही को सुखरूप, उष्ण शीत बाधा रहित।।

ॐ ह्रीं श्री सुगन्धितपवनातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

होता अति आनन्द, जिन गुण गाते जीव सब।
क्लेश ताप से दूर, साता पाते हैं सभी।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वानन्दकारकातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक योजन तक भूमि, हो जाती कंटक रहित।
दिव्य प्रभा से युक्त, सबके मन को मोहता।।

ॐ ह्रीं श्री कंटकरहितातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य सुगन्धित नीर, गन्धोदक कहते जिसे।
होती इसकी वृष्टि, अन्तर्मन होता सहज।।

ॐ ह्रीं श्री गन्धोदकवृष्ट्यतिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रच दो सौ पच्चीस, स्वर्णकमल प्रभु चरणतल।
हर्षित होते देव, प्रभु विहार करते समय।।

ॐ ह्रीं श्री पदतलकमलरचनातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल गगनाकाश, सुर विमान शोभित हुए।
पुष्प वृष्टि भरपूर, बार-बार सुन्दर हुई।।

ॐ ह्रीं श्री निर्मलगगनातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश दिश निर्मल होय, प्रभु की निर्मलता कहें।
निर्मल हों, परिणाम, भव्य जनों के सर्वदा।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वदिशानिर्मलातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जय-जय शब्द विराट, दशों दियायें सुन रहीं।
जिनवर की जयकार, जल थल नभ में गूँजती।।

ॐ ह्रीं श्री जय-जयशब्दातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म-चक्र गतिमान, एक सहस आरे सहित।
प्रभु विहार के काल, देव लिये आगे चलें।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्रातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों मंगल द्रव्य, शोभित प्रभु सान्निध्य पा।
नयन न होते तृप्त, बार-बार देखें सभी।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टमंगलद्रव्यातिशयसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट प्रातिहार्य सम्बन्धी अर्घ्य

(पद्धरि छन्द)

जिनवर प्रभु के पीछे प्रधान, है तरु अशोक शोभायमान।
शुभ-पुष्पवृष्टि करते सदैव, नभ से प्रमुदित हो सर्व देव।।

ॐ ह्रीं श्री अशोकवृक्षपुष्पवृष्टिप्रातिहार्यसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्यध्वनि खिरती बार-बार, सर्वार्थ सर्व भाषा प्रकार।
प्रभु शीश श्वेत चामर प्रधान, ढोरत हैं चौंसठ यक्ष आन।।

ॐ ह्रीं श्री दिव्यध्वनिचतुःषष्टिचामरवीज्यमानप्रातिहार्य-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाजे साढ़े बारह करोड़, सुर-सदन स्वरों से रहे जोड़।
भामण्डल की शोभा विचित्र, सातों भव दर्शाते सचित्र।

ॐ ह्रीं श्री देवदुन्दुभिप्रभामण्डलप्रातिहार्यसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहासन स्वर्णमई महान, है रत्नजड़ित शोभायमान।
हैं तीन छत्र शोभित सुशीश, त्रिभुवनपति जिन सम्राट ईश।।

ॐ ह्रीं श्री सिंहासन-छत्रत्रयप्रातिहार्यसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्त चतुष्टय सम्बन्धी अर्घ्य

(ताटंक)

ज्ञानावरणी कर्म नाश कर पाते क्षायिक केवलज्ञान।
तीन लोक त्रय काल झलकते ऐसा प्रभु का ज्ञान महान।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तज्ञानस्वरूप-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घाति दर्शनावरणी क्षय कर गुण अनन्त दर्शन पाते।
तीन काल तीनों लोकों के दृष्टा प्रभु हम गुण गाते।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तदर्शनस्वरूप-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहनीय का सर्वनाश कर प्रभु सुख गुण अनंत पाया।
कभी न पर से बाधित होता ऐसा सुख गुण प्रकटाया।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तसुखस्वरूप-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतराय सम्पूर्ण नष्ट कर वीर्य स्वगुण अनंत पाते।
भवदुःखहारी शिवसुखकारी परमोत्तम मंगल पाते।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तवीर्यस्वरूप-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

(दोहा)

उपर्युक्त छ्यालीस गुण, धारी श्री अरहंत।
पूर्ण अर्घ्य अर्पण करूँ, जय जय जय भगवंत।।

वीतराग लोकज्ञ हो, प्रभु सर्वज्ञ महान।
आत्मज्ञ भी हो तुम्हीं, जयजिनेन्द्र भगवान।।

ॐ ह्रीं श्री षट्चत्वारिंशद्गुणसहितारहंतपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

श्री अरहंत स्वरूप को, वन्दूँ मन-वच-काय।
प्रभु पथ अनुगामी बनूँ, जो शाश्वत सुखदाय।।
जिन दर्शन से प्राप्त हो, निज ज्ञायक का दर्श।
ज्ञायक तत्त्व महान से, हो मेरा उत्कर्ष।।

(वीरछंद)

द्रव्य और गुण पर्यायों में तुलना करता हे जिनराज।
तेरे मेरे द्रव्य और गुण त्रैकालिक ध्रुव चेतनराज।।
यह चेतन है – ऐसा अन्वय चेतन द्रव्य कहा जाता।
द्रव्याश्रित चैतन्य विशेषण चेतन का गुण कहलाता।।
समय मात्र मर्यादित हैं जो चेतन सत्ता के परिणाम।
क्षणवर्ती पर्याय वही चैतन्य विवर्तन हे भगवान।।

मुक्ताओं का हार झूलता मोती उसमें गर्भित है।
स्वच्छ धवलता भी मोती की उसमें सदा समर्पित है।।

चेतन में ही गर्भित रहते उसके क्षणवर्ती परिणाम।
और उसी में लीन रहें चैतन्य विशेषण हे भगवान।।

गुण-पर्यायों से जब दृष्टि हट जाती है हे जिनराज।
मात्र द्रव्य ही भासित होता क्षयकर मोह शत्रु साम्राज्य।।

कब ऐसा दिन आयेगा प्रभु करूँ आपका सच्चा ज्ञान।
मोह शत्रु का नाश करूँगा और बनूँगा मैं भगवान।।

वीतराग अर्हन्त जिनेश्वर नमन करूँ मैं बारम्बार।
सहज शुद्ध चैतन्यराज का परिणति में लेकर आधार।।

ॐ ह्रीं श्री षट्चत्वारिंशत्गुणसहित-अरहंतपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीर्वाद

(दोहा)

श्री अरहन्त जिनेन्द्र को, वन्दूँ बारम्बार।
गुण षट्चालीस युक्त जो, महिमा अपरम्पार।।

चेतन के गुण चार हैं, शेष पुण्य फल जान।
गुण अनन्तमय राजते, परम पूज्य भगवान।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

नाथ तुम्हारी पूजा में सब, स्वाहा करने आया।
तुम जैसा बनने के कारण, शरण तुम्हारी आया।।टेक।।
पंचेन्द्रिय का लक्ष्य करूँ मैं, इस अग्नि में स्वाहा।
इन्द्र-नरेन्द्रों के वैभव की, चाह करूँ मैं स्वाहा।
तेरी साक्षी से अनुपम मैं यज्ञ रचाने आया।।१।।
जग की मान प्रतिष्ठा को भी, करना मुझको स्वाहा।
नहीं मूल्य इस मन्द भाव का, व्रत-तप आदि स्वाहा।
वीतराग के पथ पर चलने का प्रण लेकर आया।।२।।
अरे जगत के अपशब्दों को, करना मुझको स्वाहा।
पर लक्ष्यी सब ही वृत्ती को, करना मुझको स्वाहा।
अक्षय निरंकुश पद पाने और पुण्य लुटाने आया।।३।।
तुम हो पूज्य पुजारी मैं, यह भेद करूँगा स्वाहा।
बस अभेद में तन्मय होना, और सभी कुछ स्वाहा।
अब पामर भगवान बने, यह सीख सीखने आया।।४।।

श्री सिद्ध परमेष्ठी पूजन

स्थापना

(गीतिका)

गुण अनंतानंत धारी नमों सिद्ध निरंजनम्।
अष्टकर्म विनाशकर्ता जगत पति अघभंजनम्।।
मोह रागादिक विकारी भाव जय कर्ता स्वयम्।
प्रकट उर में पारिणामिक भाव ही उत्तम परम्।।

निजानंद स्वरूप चिन्मय चिदानंद स्वरूपकम्।
जिणाणं जिद भवाणं परमात्मतत्त्व प्रकाशकम्।।
निर्विकार विकारवर्जित पूर्ण सुखकर अनुभवम्।
स्वयं ज्योति स्वरूप निर्मल स्वयं रत्नत्रय शिवम्।।

सर्व घाति अघातिनाशक सकल भवभय दुखहरम्।
ऋषि मुनीश्वर साधुवंदित सत्य शिवमय सुन्दरम्।।
त्रिलोकाग्र हुए विराजित नष्ट कर भव-अंजनम्।
सर्वदा मंगल स्वरूपी भव्य जन-मन-रंजनम्।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टगुणसंयुक्त-सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री अष्टगुणसंयुक्त-सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री अष्टगुणसंयुक्त-सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अवतार)

मैं लाऊँ उत्तम नीर, उज्ज्वलता-कारी।
प्रभु जन्म-मृत्यु की परी, नाशूँ दुखकारी।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
मिथ्यात्व मोह अज्ञान का, अब नाश करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं लाऊँ चंदन गंध, शीतलता-कारी।
नाशूँ भव-ज्वर दुर्गन्ध, लूँ शिवपद भारी।।

सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
कर सात तत्त्व श्रद्धान, आत्मविकास करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्य: संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

ले अक्षत तंदुल पुंज, प्रभुवर भेंट करूँ।
अक्षय पदमयी निकुंज, पा भवबंध हरूँ।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
मैं करूँ भेदविज्ञान, निज में वास करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

लूँ उत्तम पुष्प सुवास, निज ज्ञायक ध्याऊँ।
कर काम-बाण का नाश, सिद्ध स्वपद पाऊँ।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
मैं पाऊँ सम्यग्ज्ञान, ज्ञान-प्रकाश वरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्य: कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लाऊँ उत्तम चरु नाथ, क्षुधा रोग नाशूँ।
छोड़ूँ न कभी तुव साथ, निज पद परकाशूँ।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
शुद्धातम का कर भान, मुक्ति-निवास वरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज दीपक ज्योति प्रसिद्ध, लाऊँ मोह हनूँ।
लूँ केवलज्ञान स्व-सिद्ध, मैं अरहंत बनूँ।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
तुम सम अपने को जान, शुद्ध सुवास वरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्य: मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले ध्यान धूप की ज्वाल, कर्म विनाश करूँ।
पाऊँ निज स्वपद विशाल, पूर्ण विकास करूँ।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
जागृत कर चेतन प्राण, मुक्ताकाश वरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले आत्मज्ञान फल दिव्य, निज का ध्यान करूँ।
पा महामोक्ष फल भव्य, पद निर्वाण वरूँ।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
पाऊँ मैं ज्ञान महान, भव का त्रास हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ भावरूप यह अर्घ्य, ध्रुव सुख हित अक्षम।
पाऊँ मैं स्व-पद अनर्घ्य, ऐसा हो विक्रम।।
सिद्धों का कर गुणगान, श्रुत अभ्यास करूँ।
चैतन्य राज सुखखान, शिवपुर वास करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध परमेष्ठी के अष्ट गुण सम्बन्धी अर्घ्य

चान्द्रायण (अडिल्ल)

शुद्ध ज्ञान गुण से सम्पन्न महा प्रभो।
ज्ञानावरणी नाश कर चुके हे विभो।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री पंचप्रकारज्ञानावरणीकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन गुण परिपूर्ण प्रकट है आपका।
क्षय कर दर्शन आवरणी संताप का।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री नवप्रकारदर्शनावरणीकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अव्याबाधी गुण के अधिपति सिद्ध प्रभु।
वेदनीय की व्यथा विनाशक शुद्ध प्रभु।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री द्विप्रकारवेदनीयकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षायिक समकित गुण के धारी आप हैं।
मोहनीय हर त्रिभुवन नामी आप हैं।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टाविंशति:विधमोहनीयकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवगाहन गुण सहित विराजे हैं प्रभो।
आयुकर्म हर निज में राजे हैं विभो।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विध-आयुकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूक्ष्मत्व गुण प्रकट हुआ स्वयमेव ही।
नाम कर्म के नाशक सच्चे देव ही।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिनवतिप्रकारनामकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अगुरुलघुत्व स्वगुण की महिमा प्राप्त कर।
गोत्रकर्म को नाशा शिवसुख व्याप्त कर।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री द्विप्रकारगोत्रकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीर्य स्वगुण की महिमा से मंडित प्रभो।
अंतराय कर चुके पूर्ण खंडित विभो।।
अष्ट कर्म हर सिद्ध स्वपद पाया प्रभो।
गुण अनंत का सागर लहराया विभो।।

ॐ ह्रीं श्री पंचप्रकार-अंतरायकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

यही परम पद प्राप्त करूँ यदि ध्यान में।
जाऊँ सिद्धपुरी के स्वर्ण विहान में।।
सोया निज पुरुषार्थ जगाऊँ हे प्रभो।
पूर्ण अर्घ्य मैं करूँ समर्पित हे विभो।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टकर्मविनाशकसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

राधिका (लावनी)

ध्रुव अचल सर्व सिद्धों को सविनय वन्दन।
घन घाति अघाति विनाशक नित्य निरंजन।।
प्रभु द्रव्य भाव वचनों से तुम गुण गाऊँ।
शुद्धातम के प्रतिछंद आपको ध्याऊँ।।

निज अवलंबन से ध्रुव गति तुमने पाई।
पर परिणति कर विश्रांत अचलता पाई।।

जग की उपमाएँ तुम सन्मुख शरमाईं।
निर्बाध अचल अविकल अनुपम सुखदाई।।

है परम पारिणामिक स्वभाव निज पंचम।
ज्ञायक स्वभाव की पावन गरिमा अनुपम।।
आनन्द अतीन्द्रिय की ध्रुव-धारा पाई।
अनुभव की महिमा ऋषि मुनियों ने गाई।।

सारे विभावमय भाव आपने जीते।
हो गये आस्रव बन्ध भाव से रीते।।
संवर पूर्वक निर्जरा सु तरणी पाई।
बन्धों की प्रबल शृंखला दूर हटाई।।

है धर्म अर्थ अरु काम शून्य गति शिवमय।
अपवर्ग मोक्ष निर्वाण स्वगति मंगलमय।।

ज्ञायक स्वभाव ध्रुव मेरा प्रभु जागा है।
मिथ्यात्व मोह भ्रम भाव पूर्ण भागा है।।
चैतन्यराज का चमत्कार पाऊँगा।
लोकाग्र शीष पर मैं भी प्रभु आऊँगा।।
है यही प्रार्थना मेरी अन्तर्यामी।
मैं भी बन जाऊँ तुम समान ध्रुवधामी।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टगुणसंयुक्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीर्वाद

(दोहा)

सिद्ध प्रभु की वन्दना, हरती भव दुख क्लेश।
द्रव्यदृष्टि से सिद्ध सम, सब जीवों का वेश।।
जो भी निज का ध्यायेगा, होगा सिद्ध महंत।
सकल कर्ममल नाश कर, मुक्तिकंत भगवंत।।

इत्याशीर्वाद:

भजन

मैं महापुण्य उदय से जिनधर्म पा गया।।टेक।।
चार घाति कर्म नाशे ऐसे अरहंत हैं।
अनन्त चतुष्टय धारी श्री भगवंत हैं।।
मैं अरहंत देव की शरण आ गया।।1।।
अष्ट कर्म नाश किये ऐसे सिद्ध देव हैं।
अष्ट गुण प्रकट जिनके हुए स्वयमेव हैं।।
मैं ऐसे सिद्ध देव की शरण आ गया।।2।।
वस्तु का स्वरूप बतावे वीतराग-वाणी है।
तीन लोक के जीव हेतु महा कल्याणी है।।
मैं जिनवाणी माँ की शरण आ गया।।3।।
परिग्रह रहित दिगम्बर मुनिराज हैं।
ज्ञान-ध्यान सिवा नहीं दूजा कोई काज है।।
मैं श्री मुनिराज की शरण पा गया।।4।।

श्री आचार्य परमेष्ठी पूजन

स्थापना

(ताटंक)

श्री आचार्य सुगुरु मुनिवर को बार-बार मेरा वन्दन।
साधु संघ के संचालक हैं तदपि ध्यानरत आत्ममगन।।
साधु संघ की सर्वव्यवस्था करते हैं होकर निष्पक्ष।
धर्म मार्ग पर सबको लाते उर में निज स्वभाव प्रत्यक्ष।।
गुण छत्तीस सदा धारी मुनि गाते जिनकी जयकार।
मैं भी इनके चरणों की पूजन करता हूँ बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री षड्त्रिंशत्गुणसहित-आचार्यपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री षड्त्रिंशत्गुणसहित-आचार्यपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री षड्त्रिंशत्गुणसहित-आचार्यपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अडिल्ल)

उज्ज्वल जल के कलश चरण अर्पित करूँ।
जन्म-जरादिक त्रिविध व्याधियों को हरूँ।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्यविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

लाऊँ शीतल चंदन मलयज बावना।
भव आताप विनाश करूँ है चाहना।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचिमय अक्षत धवल चरण अर्पित करूँ।
अक्षय पद की प्राप्ति करूँ भवदुख हरूँ।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पद्रुम पुष्पों की गंध सुहावनी।
काम व्यथा विध्वंस करूँ दुखदायिनी।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: कामबाणविध्वसंनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुभव रस-नैवेद्य प्राप्ति का ध्येय है।
क्षुधा रोग नाशूँ जो पूरा हेय है।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान दीप की परम ज्योति उर में धरूँ।
मोहमयी अज्ञान दशा पूरी हरूँ।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्लध्यान की अग्नि जलाऊँ हे प्रभो।
अष्ट कर्म सम्पूर्ण जलाऊँ हे विभो।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मभावना के फल मैं लाऊँ प्रभो।
महामोक्षफल की महिमा पाऊँ विभो।।
आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दशविध धर्म स्वरूपी अर्घ्य बनाऊँगा।
पद अनर्घ्य अविलम्ब नाथ प्रकटाऊँगा।।

आचार्यों को भाव सहित वन्दन करूँ।
दीक्षा ले भगवती कर्म-बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश तप सम्बन्धी अर्घ्य

(चौपाई)

एक-एक कर बहु उपवास। एक वर्ष तक निज में वास।
एक ग्रास या लें दो ग्रास। रहते निज स्वरूप के पास।।

ॐ ह्रीं श्री अनशन-अवमौदर्यतपस्सहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खान-पान संख्या निर्धार। निज स्वरूप का करें विचार।
षट्रस अथवा कुछ रस त्याग। त्यागें भोजन का ही राग।।

ॐ ह्रीं श्री व्रतपरिसंख्यान-रसपरित्यागतपस्सहिताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूमि शयन कछु पिछली रात। शुद्धातम से करते बात।।
प्रतिदिन धारें काय क्लेश। बुद्धिपूर्वक खेद न लेश।।

ॐ ह्रीं श्री विविक्तशय्यासन-कायक्लेशतपस्सहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोषों का प्रायश्चित्त नित्य। विनयस्वरूपी ध्रुव के भृत्य।।
विनय भावना से आपूर्ण। करते रहते कर्म विचूर्ण।।

ॐ ह्रीं श्री प्रायश्चित्त-विनयतपस्सहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैय्यावृत्त्य भाव उरधार। रोगी मुनियों का उपचार।।
स्वाध्याय करते तिहुँकाल। वन्दूँ मुनिवर भाव विशाल।।

ॐ ह्रीं श्री वैयावृत्त्य-स्वाध्यायतपस्सहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपव्युत्सर्ग सहज अनुरूप। तन ममत्व तज ध्यान स्वरूप।।
ध्यान लीन प्रतिपल मुनिराज। करें आत्मा का ही काज।।

ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्ग-ध्यानतपस्सहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् आवश्यक सम्बन्धी अर्घ्य

(चौपाई)

सामायिक से ओत प्रोत। ज्ञान-ध्यान के उत्तम स्रोत।।
नित्य संस्तवन जिन तीर्थेश। मन वच काय त्रियोग हमेशा।।

ॐ ह्रीं श्री सामायिक-स्तुति-आवश्यकसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा वन्दना जिनवर देव। भाव द्रव्य कर सुखी सदैव।।
प्रतिक्रमण नित निज में आय। निज घर से बाहर ना जाय।।

ॐ ह्रीं श्री वन्दना-प्रतिक्रमणावश्यकसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धारें प्रत्याख्यान अवश्य। मन वच तन सब करके वश।।
कायोत्सर्ग ममत्व न देह। निज में रहते निःसंदेह।।

ॐ ह्रीं श्री प्रत्याख्यान-कायोत्सर्ग-आवश्यकसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचाचार सम्बन्धी अर्घ्य

(चौपाई आँचलीबद्ध)

सदा दर्शनाचार प्रधान। देखें शुद्ध भाव उर आन।।
प्रतिपल भाता ज्ञानाचार। कर अज्ञान दशा परिहार।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शन-ज्ञानाचारसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पालक पूर्ण चरित्राधार। सर्व कषायभाव निरवार।।
तपाचार इच्छा परिहार। करें निर्जरा सर्व प्रकार।।
वीर्याचार प्रबल सुख रूप। पायेंगे निश्चित शिवरूप।।
परम गुरु हो, जय आचार्य परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं श्री चारित्र-तपोवीर्याचारसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण धर्म सम्बन्धी अर्घ्य

(चौपाई)

क्षमा धर्म के पालक नाथ, क्रोध कषाय विनाशक नाथ।
मार्दव भाव हृदय में धार, मान कषाय पूर्ण संसार।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमा-मार्दवधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋजुतारूप आर्जव भाव, निश्छल ध्याते आत्मस्वभाव।
शौच धर्म में अति शुचि रूप, लोभ कषाय हुई विद्रूप।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमार्जव-शौचधर्मसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म पालें सुखदाय, झूठ वचन त्यागें दुखदाय।
निश्चय संयमपति मुनिराज, कर्म नाश होते शिवराज।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्य-संयमधर्मसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप के द्वादश भेद अनूप, उत्तम धर्म निर्जरा रूप।
उत्तम त्याग धर्म उरधार, सर्व विभाव भाव परिहार।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपस्त्याग-धर्मसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व परिग्रह तज चौबीस, आकिंचन गुणधारी ईश।
ब्रह्मचर्य का तेज महान, आत्मब्रह्म में रमें प्रधान।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमाकिंचन्य-ब्रह्मचर्यधर्मसहिताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन गुप्ति सम्बन्धी अर्घ्य

(चौपाई आँचलीबद्ध)

मनोगुप्ति के धारक आप। नाशे सकल विकारी पाप।
वचन गुप्ति धर रहते मौन। शुद्ध भाव लाते उर भौन।।
काय गुप्ति धर देह अडोल। आत्मध्यान में ही कल्लोल।
परम गुरु हो, जय आचार्य परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं श्री मनोगुप्ति-वचनगुप्ति-कायगुप्तिसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

(चौपाई आँचलीबद्ध)

श्री आचार्य स्वगुणपति ईश। धारें पूरे गुण छत्तीस।।
परम गुरु हो, जय आचार्य परम गुरु हो।।
पूर्ण अर्घ्य प्रभु चरण चढ़ाय। लूँ निर्ग्रन्थ स्वपद शिवदाय।।
परम गुरु हो, जय आचार्य परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं श्री षट्त्रिंशत्गुणसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(ताटंक)

श्री वृषभादिक वीर जिनेश्वर के गणधर सब करें नमन।
वृषभसेन आदिक गौतम गणधर स्वामी को है वन्दन।।
श्री सुधर्मा जम्बूस्वामी अन्तिम केवलि को वन्दूँ।
सभी केवली सभी पूर्वधर शिक्षक गुरुवर अभिनन्दूँ।।

श्रुतकेवलि विष्णु अपराजित नन्दिमित्र गोवर्धन नाम।
भद्रबाहु अन्तिम श्रुतकेवलि प्रौष्ठिल लोहाचार्य प्रणाम।।
श्री धरसेनाचार्य भूतबलि पुष्पदन्त यति वृषभ महान।
कुन्दकुन्द आचार्य उमा स्वामी श्री वीरसेन गुणवान।।
कार्तिकेय अकलंक अमितगति माघनन्दि रविषेण प्रधान।
पूज्यपाद गुणभद्राचार्य समन्तभद्र जिनसेन महान।।
पात्र-केसरी अर्हद्बलि शुभचन्द्र देव योगेन्दु मुनीन्द्र।
देवसेन श्री विद्यानन्दि मानतुंग प्रभचन्द्र यतीन्द्र।।
पद्मप्रभमलधारी स्वामी अमृतचन्द्राचार्य प्रधान।
नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती श्री सिंहनन्दि गुणवान।।
अभयचन्द्र श्री कनकनन्दि मुनि यशोभद्र माइल्लधवल।
बुद्धि पूर्वक करूँ संस्तवन नित प्रति वन्दूँ चरण-कमल।।
इत्यादिक आचार्य सुगुरु शत-शत ऋषियों को करूँ प्रणाम।
विनय भाव से अर्घ्य चढ़ाऊँ पाऊँ निजपुर में विश्राम।।
वीतराग निर्ग्रन्थ सुगुरु के पद पर जो होते आसीन।
वे ही करते हैं कल्याण जगत का हो स्वभाव में लीन।।

ॐ ह्रीं श्री षट्त्रिंशत्गुणसहित-आचार्यपरमेष्ठिभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीर्वाद

(दोहा)

परम्परा गुरु से मिला, जिनवाणी का ज्ञान।
लिपीबद्ध करते उसे, यह उपकार महान।।
श्री आचार्य चरण-कमल, नित वन्दूँ धर ध्यान।
जिन-दीक्षा ले मैं करूँ, स्वयं आत्मकल्याण।।

इत्याशीर्वादः

श्री उपाध्याय परमेष्ठी पूजन

स्थापना

ग्यारह अंग पूर्व चौदह के पाठी उपाध्याय मुनिराज।
जिन आगम के पठन और पाठन में रत रहते ऋषिराज।।
साधु सुगुण से मंडित स्वामी बहुश्रुतज्ञानी निश्चित आप।
पढ़ते स्वयं पढ़ाते सबको हर अज्ञान भाव संताप।।
मेरे मन में भी पूजन करने का जागा है शुभ भाव।
जिनवाणी का करूँ अध्ययन त्वरित करूँ अज्ञान अभाव।।

ॐ ह्रीं श्री पंचविंशतिः गुणसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री पंचविंशतिः गुणसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री पंचविंशतिः गुणसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

शुद्ध जल लाऊँ हृदय से चरण में अर्पित करूँ।
जन्म मरण जरा विनाशूँ रोग त्रय भव के हरूँ।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध चंदन समर्पित कर भवातप ज्वर क्षय करूँ।
परम शीतल शान्ति पाऊँ विभावों को जय करूँ।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध अक्षत स्वगुण पाऊँ प्राप्त अक्षय पद करूँ।
भवोदधि को पार करके भवभ्रमण दुख सब हरूँ।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शील पुष्प सजा हृदय में विकारों को जय करूँ।
कामरोग विनाश करके सकलभवदुख क्षय करूँ।।

उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।
ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
सुचरु लाऊँ स्वानुभव रस भरे परम सुगंधमय।
क्षुधारोग विनाश कर दूँ जो सदा से बंधमय।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।
ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ज्ञान दीप प्रजाल मिथ्या मोह भ्रम तम को हरूँ।
पूर्ण ज्ञान प्रकाश पाऊँ सतत ही आनन्द करूँ।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।
ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
ध्यान धूप प्रसिद्ध लाऊँ धर्म दश निर्मित परम।
कर्म आठों नष्ट कर दूँ सहज करके परिश्रम।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।
ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
धर्म फल ही मोक्ष फल है उसे ही पाऊँ प्रभो।
गुणस्थानातीत होकर मोक्ष में जाऊँ विभो।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।
ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
ज्ञान गुणमय अर्घ्य लाऊँ पद अनर्घ्य मुझे मिले।
सिद्धपुर साम्राज्य पावन अब निजंतर में झिले।।
उपाध्याय महान की मैं भक्ति से पूजन करूँ।
भावश्रुत ज्ञानी बनूँ अज्ञान के बंधन हरूँ।।
ॐ ह्रीं श्री उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह अंग सम्बन्धी अर्घ्य

(चौपाई)

आचारांग ज्ञान के ज्ञाता। उपाध्याय मुनिवर विख्याता।।
क्रिया आचरण इसमें वर्णित। मुनियों का आचार सुगर्भित।।
ॐ ह्रीं श्री आचारांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
सूत्रकृतांग महान शुभंकर। उपाध्याय मुनि नमूँ हितंकर।।
स्वसमय और परसमय वर्णन। धर्मक्रिया का कथन सुपावन।।
ॐ ह्रीं श्री सूत्रकृतांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
स्थानांग रूप समझाते। उपाध्याय मुनि निज को ध्याते।
भेज जीव पुद्गल बतलाए। इस दो षट् या अधिक जताए।।
ॐ ह्रीं श्री स्थानांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
समवायांग महान ज्ञानमय। उपाध्याय गुरुदेव ध्यानमय।।
सब द्रव्यों का इसमें वर्णन। क्षेत्र काल भावों का सुकथन।।
ॐ ह्रीं श्री समवायांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
व्याख्या प्रज्ञप्त्यंग मनोहर। उपाध्याय ज्ञानी हैं सुखकर।
अस्ति नास्ति युत जीव अनेका। साठ सहस प्रश्नोत्तर लेखा।।
ॐ ह्रीं श्री व्याख्याप्रज्ञप्तिज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ज्ञातृकथांगधर्म जिन भूषित। उपाध्याय व्याख्या कर हर्षित।।
चक्री कामदेव तीर्थंकर। दिव्यध्वनि वर्णन संशय हर।।
ॐ ह्रीं श्री ज्ञातृधर्मकथांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अंग उपासकाध्ययन आचरण। सिखलाते हैं उपाध्यायगण।।
पाक्षिक नैष्ठिक श्रावक साधक। एकादश प्रतिमा सुखदायक।।
ॐ ह्रीं श्री उपासकाध्ययनांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अत:कृद्दशांग के ज्ञानी। उपाध्याय समझायें ध्यानी।।
तीर्थंकर के समय सुदस दस। अन्त:कृत केवली आत्मवश।।
ॐ ह्रीं श्री अंत:कृद्दशांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अनुत्तरांग कथायें सुन्दर। उपाध्याय समझाते मनहर।।
दस दस मुनि उपसर्ग भयंकर। जय कर हों अहमिन्द्र अनुत्तर।।
ॐ ह्रीं श्री अनुत्तरांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्न व्याकरण अंग सुहाना। उपाध्याय ने पूरा जाना।।
आक्षेपिणि विक्षेपिणि आदिक। नष्ट प्रश्न व्याकरणकथादिक।।
ॐ ह्रीं श्री प्रश्नव्याकरणांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु विपाक सूत्रांग पढ़ाते। शिवपथ पर नित चरण बढ़ाते।।
कर्म विपाक आदि बतलाते। तीव्र मंद के भेद जताते।।
ॐ ह्रीं श्री विपाकसूत्रांगज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदह पूर्व सम्बन्धी अर्घ्य

है उत्पाद पूर्व सातामय। उपाध्याय प्रभु करते अघ क्षय।।
वस्तु सहित उत्पाद ध्रौव्य व्यय। वस्तु ध्रौव्य पर्याय नाश मय।।
ॐ ह्रीं श्री उत्पादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आग्रायणी पूर्व को पढ़कर। पाया निज स्वभाव ध्रुव गुणकर।।
सप्त तत्त्व षट्द्रव्य पदारथ। नय दुर्नय विवेक परमारथ।।
ॐ ह्रीं श्री अग्रायणीपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है वीर्यानुवाद फलदायक। ऋद्धि सिद्धि दाता बलदायक।।
आत्मवीर्य परवीर्य जानते। ज्ञान चरित तपनीय मानते।।
ॐ ह्रीं श्री वीर्यानुप्रवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्ति नास्ति प्रवाद अनूठा। है एकान्तवाद सब झूठा।।
स्व से अस्ति नास्ति पर से है। वस्तु सुनय से कथन प्रवर है।।
ॐ ह्रीं श्री अस्ति-नास्तिप्रवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानप्रवाद ज्ञान का दाता। उपाध्याय पद जग विख्याता।
पाँच प्रकार ज्ञान बहु भेदम्। है प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाणम्।।
ॐ ह्रीं श्री ज्ञानप्रवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्यप्रवाद पूर्व की महिमा। उपाध्याय ऋषियों की गरिमा।।
दस प्रकार के सत्य सुहाए। सप्तभंग से वस्तु बताए।।
ॐ ह्रीं श्री सत्यप्रवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मप्रवाद आत्मकल्याणी। उपाध्याय पाठी बहु ज्ञानी।।
निश्चयनय से जीव शुद्ध है। व्यवहारी भव में अशुद्ध है।।
ॐ ह्रीं श्री आत्मप्रवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मप्रवाह कर्म का नाशक। उपाध्याय मुनि सत्य प्रकाशक।।
कर्मप्रकृति सत्ता का वर्णन। बंध उदय उदीरणा सुकथन।।
ॐ ह्रीं श्री कर्मप्रवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यान परम हितकारी। ज्ञान क्रिया ही शिवसुखकारी।।
संवरभाव आस्रव हारी। द्रव्य क्षेत्र कालादि विचारी।।
ॐ ह्रीं श्री प्रत्याख्यानपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है विद्यानुवाद के धारी। सब विद्याओं के अधिकारी।।
विद्या तथा महाविद्याएँ। साधन की विधि सुगुरु बताएँ।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यानुवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है कल्याणवाद दुखहर्ता। रोगादिक हर तन सुखकर्ता।।
जिनवर के पाँचों कल्याणक। रविशशि की गतिनिमित्त आदिक।।
ॐ ह्रीं श्री कल्याणवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है प्राणानुवाद सुखदायक। विविध भाँति शुभ ज्ञान प्रदायक।।
ज्योतिष वैद्यक आयु श्वास बल। इन्द्रिय मरण घात जीवन पल।।
ॐ ह्रीं श्री प्राणानुवादपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रिया विशाल पूर्व के धारी। मोक्ष क्रिया के हैं अधिकारी।।
नृत्य शास्त्र संगीत व्याकरण। वर्णित पुरुष आदि का लक्षण।।
ॐ ह्रीं श्री क्रियाविशालपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक बिन्दु पूर्व भव नाशक। निश्चय आत्मस्वरूप प्रकाशक।।
तीन लोक रचना का दर्शन। बीज गणित आदिक का वर्णन।।
ॐ ह्रीं श्री लोकबिन्दुपूर्वज्ञानसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

गुण पच्चीस महान युत, उपाध्याय मुनिराज।
बहु श्रुतधर युग चरण को, वन्दूँ मन-वच-काय।।
ॐ ह्रीं श्री पंचविंशति:गुणसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

उपाध्याय की शरण प्राप्त कर जिन आगम का कर लूँ ज्ञान।
आत्मभान कर निज में आऊँ हे प्रभु करूँ आत्मकल्याण।।

एक अचल सम्यग्दर्शन से आत्मसिद्धि को प्राप्त करूँ।
कर्म कलुषता पूरी क्षयकर निजानंद उर व्याप्त करूँ।।
जब तक पर पदार्थ का आश्रय लिया तभी तक दुख पाया।
जीव तत्त्व निज का आश्रय लेते ही उर में सुख छाया।।
प्रकट योग्य पर्यायों में यह नित्य स्थायी आत्मस्वरूप।
नाश योग्य पर्याय आस्रव बंध भाव ही भवदुख रूप।।
अशुचि रूप आस्रव बंधों का संवर द्वारा कर परिहार।
शुद्ध निर्जरा द्वारा पाऊँ मोक्ष तत्त्व का सौख्य अपार।।
निज चैतन्यराज के बल से पूर्ण सिद्ध मैं बन जाऊँ।
सारी भव-रज धो डालूँ मैं निष्कलंक पद प्रकटाऊँ।।
इतना ही आशीर्वाद श्री उपाध्याय का मैं पाऊँ।
निजस्वरूप का अवलम्बन लूँ प्रभु फिर न लौट भव में आऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री पंचविंशति:गुणसहित-उपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो जयमालामहार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपाध्याय गुण जानकर, जो पूजें मन लाय।
भाव-भासना प्राप्त कर, पावें मोक्ष उपाय।।

इत्याशीर्वाद:

अरहन्त के प्रतिबिम्ब का वचन द्वार से स्तवन करना, नमस्कार करना, तीन प्रदक्षिणा देना, अंजुलि मस्तक चढ़ाना, जल-चन्दनादिक अष्ट द्रव्य चढ़ाना; सो द्रव्यपूजा है। अरहंत के गुणों में एकाग्र चित्त होकर, अन्य समस्त विकल्प-जाल छोड़कर गुणों में अनुरागी होना तथा अरहंत के प्रतिबिम्ब का ध्यान करना; सो भाव पूजा है।

श्री साधु परमेष्ठी पूजन

स्थापना

(वीरछंद)

पंच महाव्रत पंच समिति पंचेन्द्रियवश रूपी चारित्र।
षड् आवश्यक शेष सप्त गुण धारी साधु महान पवित्र।।
ये ही अट्ठाईस मूलगुण निरतिचार पालन का भाव।
सावधान हो निज में जागृत रह करते हैं कर्म अभाव।।
पुण्योदय से मुनि चरणों की पूजन का पाया सौभाग्य।
शरण आपकी पाकर स्वामी जागा मेरा सोया भाग्य।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टाविंशति: मूलगुणसहितसाधुपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री अष्टाविंशति: मूलगुणसहितसाधुपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री अष्टाविंशति: मूलगुणसहितसाधुपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(अवतार)

प्रभु रत्नत्रय जल लाय, त्रिविध व्याधि हर लूँ।
परिपूर्ण अहिंसा धर्म, हृदयंगम कर लूँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।

ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु रत्नत्रय चिद्रूप, चन्दन चित् धरूँ।
परिपूर्ण सत्यव्रत पाल, भव-आताप हरूँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।

ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्य: संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु रत्नत्रय सम्पूर्ण, अक्षत उर लाऊँ।
निश्चय अचौर्य व्रत पाल, अक्षय पद पाऊँ।।

शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु रत्नत्रय के भव्य, सुमन हृदय लाऊँ।
हो काम-बाण विध्वंस, शील सहज पाऊँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु रत्नत्रय रस पूर्ण, सुचरु उर में लाऊँ।
कर क्षुधा-रोग विध्वंस, अपरिग्रह पाऊँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु रत्नत्रय के दीप, ज्योर्तिमय लाऊँ।
हो मोह-तिमिर का नाश, नव प्रकाश पाऊँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निश्चय रत्नत्रय धूप ध्यानमयी लाऊँ।
कर अष्टकर्म विध्वंस सिद्ध स्वपद पाऊँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय के अति दिव्य, उत्तम फल लाऊँ।
संसार-जाल को तोड़, मुक्ति सुफल पाऊँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निश्चय रत्नत्रय अर्घ्य, सहज सजा लाऊँ।
अनुपम अनर्घ्य पद प्राप्त, कर शिवपुर जाऊँ।।
शुद्धातम ध्येय प्रधान, साधक मुनि वन्दूँ।
निर्ग्रन्थ स्वरूप महान, नित प्रति अभिनन्दूँ।।
ॐ ह्रीं श्री साधुपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच महाव्रत सम्बन्धी अर्घ्य

(चौपाई)

परम अहिंसा व्रत के धारी, साधु मुनीश्वर पर-उपकारी।
षट्कायिक की दया पालते, निज स्वरूप को ही सँभालते।।
ॐ ह्रीं श्री अहिंसामहाव्रतसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सत्यव्रत के हैं धारी, साधु मुनीश्वर जग हितकारी।
नष्ट असत्य भाव करते हैं, अखिल विश्व पीड़ा हरते हैं।।
ॐ ह्रीं श्री सत्यमहाव्रतसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि अचौर्य व्रत के हैं धारी, साधु ऋषीश्वर संकटहारी।
दान अदत्ता ग्रहण न करते, परभावों में भ्रमण न करते।।
ॐ ह्रीं श्री अचौर्यमहाव्रतसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ब्रह्मचर्य व्रत के हैं धारी, साधु ऋषीश्वर मुनि अविकारी।
आत्मब्रह्म में सदा लीन हैं, निज स्वभाव रस में प्रवीण हैं।।
ॐ ह्रीं श्री ब्रह्मचर्यमहाव्रतसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपरिग्रही महाव्रतधारी, साधु मुनीश्वर भव दुखहारी।
हैं चौबीस परिग्रह विरहित, निज स्वरूप में लीन शुद्ध चित्।।
ॐ ह्रीं श्री अपरिग्रहमहाव्रतसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच समिति सम्बन्धी अर्घ्य

(सोरठा)

ईर्या समिति प्रसिद्ध, पालन करते हैं सदा।
चार हाथ भू देख, गमन करें मुनिराज जी।।
ॐ ह्रीं श्री ईर्यासमितिसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भाषा समिति सदैव, से भूषित यतिराज हैं।
मौन रहें मुनिराज, अथवा हित मित प्रिय वचन।।

ॐ ह्रीं श्री भाषासमितिसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समिति एषणा पाल, देख शोध भोजन करें।
दोष छ्यालिस टाल, ग्रास ग्रहण करते सुगुरु।।

ॐ ह्रीं श्री एषणासमितिसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निक्षेपण आदान, समिति पालते ध्यान से।
देखभाल कर वस्तु, धरें उठायें सर्वदा।।

ॐ ह्रीं श्री आदाननिक्षेपणसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा समिति व्युत्सर्ग, निष्प्रमाद हो पालते।
त्याग समय मल-मूत्र, जीवों की रक्षा करें।।

ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्गसमितिसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचेन्द्रिय विजय सम्बन्धी अर्घ्य

(मत्तसवैया)

स्पर्शन इन्द्रिय जय करते हैं इच्छाओं का निरोध कर।
अष्ट भेद स्पर्शन के वश में करते हैं आत्मबोध कर।।

ॐ ह्रीं श्री स्पर्शनेन्द्रियजयनिरत-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानभाव से पंच भेदयुत रसना इन्द्रिय वश में करते।
निज स्वभाव को सदा साधते शुद्ध ज्ञान रस उर में भरते।।

ॐ ह्रीं श्री रसनेन्द्रियजयनिरत-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीत घ्राण इन्द्रिय को मुनिवर ध्रुव स्वभाव में ही रमते हैं।
इसके दोनों भेद जीतकर निज स्वरूप में ही रमते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री घ्राणनेन्द्रियजयनिरत-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच भेद युत नेत्रेन्द्रिय को सदा जीतते निज स्वभाव से।
रहें निरंकुश-मुनिवर वन में, कभी न डरते हैं विभाव से।।

ॐ ह्रीं श्री चक्षुरिन्द्रियजयनिरत-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सचित्त अचित्त मिश्र तीनों ही भेद कर्ण इन्द्रिय जय करते।
गीत गान रागादि भाव की रुचि विनाश उर शिवसुख भरते।।

ॐ ह्रीं श्री कर्णेन्द्रियजयनिरत-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् आवश्यक सम्बन्धी अर्घ्य

(चान्द्रायण)

उत्तम सामायिक त्रिकाल करते सदा।
समभावी मुनि लीन ध्यान में सर्वदा।।
तीनों काल नियम से जिनवर संस्तवन।
अरु त्रियोग से करते हैं मुनि जिनभजन।।

ॐ ह्रीं श्री सामायिक-स्तवनावश्यकसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनेन्द्र वन्दना मुनीश्वर नित करें।
पाप भाव सम्पूर्णतया प्रतिपल हरें।।
कायोत्सर्ग स्वमुद्रा मुनि पावन परम।
देह ममत्व अभाव हृदय में है स्वयं।।

ॐ ह्रीं श्री वन्दना-कायोत्सर्गावश्यकसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वाध्याय का समय न मुनिवर टालते।
अपना शुद्ध स्वभाव सदैव सँभालते।।
तीन काल प्रतिक्रमण तथा आलोचना।
दोष निवारण हेतु करें कछु सोच ना।।
षट् आवश्यक धारी मुनि वन्दन करूँ।
शुद्ध भाव से कर्मों के बन्धन हरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री स्वाध्याय-प्रतिक्रमणावश्यकसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेष सप्त गुण सम्बन्धी अर्घ्य

(मौक्तिक दाम)

सु उत्तम मध्यम और जघन्य, करें कच लोच सु मुनिवर धन्य।
तजे सब वस्त्र लिया नग्नत्व, सुलज्जा से होकर निर्ममत्व।।

ॐ ह्रीं श्री केशलुंचन-वस्त्रत्यागगुणसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न्हवन करते न कभी मुनिराज, सकल शृंगार देह का त्याज।
शयन एकाशन देह सँभार, कछुक लें पिछली रयन मँझार।।

ॐ ह्रीं श्री अस्नान-भूमिशयनगुणसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं है दन्त धवन लवलेश, नहीं मंजन का कोई क्लेश।
दिवस में एक समय आहार, न भोजन के प्रति राग विकार।।

ॐ ह्रीं श्री अदन्तधोवन-एकभुक्तिगुणसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खड़े आसन से लेंय आहार, मात्र है पाणि पात्र आधार।
सदा मुनिराज ग्रास लें शोध, यहाँ भी जागृत आतम बोध।।

ॐ ह्रीं श्री स्थितिभुक्तिगुणसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

(चान्द्रायण)

मूलगुणों को निरतिचार मुनि धारते।
अतिचारों का प्रायश्चित्त विचारते।।
मैं तो निर्मल शुद्ध ज्ञान घन बुद्ध हूँ।
द्रव्य दृष्टि से मैं सदैव ही शुद्ध हूँ।।
यह पर्याय जनित अशुद्धता दूर कर।
प्रकटाऊँगा निजस्वरूप दुख पूर्ण हर।।
परिषह अरु उपसर्ग जीतते हैं सदा।
तेरह विधि चारित्र पालते सर्वदा।।
साम्यभाव चारित्र धर्म ही श्रेय है।
इसके जो विपरीत भाव वो हेय है।।
ऐसे मुनियों को सदैव वन्दन करूँ।
पूर्ण अर्घ्य के सुमन चरण अर्पण करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टाविंशति: मूलगुणसहित-साधुपरमेष्ठिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

जब जोगा वैराग्य उर, तब निज हित के काज।
भायी बारह भावना, और हुए मुनिराज।।
इन सबकी पूजन करूँ, भाव-भासना हेतु।
ज्ञान-दान वैराग्य ही, भवसमुद्र का सेतु।।

(मानव)

निश्चय रत्नत्रय पूर्वक प्रभु, पंच महाव्रत धारा।
निश्चय संयम के द्वारा, अविरत का भाव विदारा।।
जय तीन चौकड़ी करके, निर्ग्रन्थ साधु कहलाते।
शुद्धता प्राप्त करते हैं, शुभ भावों को बहलाते।।
आषाढ़ मास की बेला, मेघावलि का घनगर्जन।
मुनिराज वनों में रहकर, करते स्वभाव का चिंतन।।
चैतन्य स्वभावी परिणति, के मंजुल गीत सुनाते।
पर परिणति यदि आ जाये, तो उसको खूब छकाते।।
मनभावन सावन आया, तरुतल मुनियों को भाया।
वर्षा में भींज रहे हैं, आनन्द अतीन्द्रिय छाया।।
परिणति स्वभाव में झूले, कर शुद्ध भा हृदयंगम।
षष्टम से चढ़ सप्तम में, शुद्धोपयोग है अनुपम।।
भादों की अँधियारी में, निज ज्ञान-ज्योति उजियारी।
कैवल्य सूर्य किरणावलि, की आभा प्यारी-प्यारी।।
आश्विन की शरद सुहायी, समदर्शी के अन्तर में।
छवि यथाख्यात चारित्र की, छायी है बाह्यान्तर में।।
कार्तिक में दीपावलियाँ, आलोक ज्ञान का लातीं।
दुखमय भव वन की सीमा, का अन्तिम छोर बतातीं।।
मगसिर अरु पौष सहज ही, हेमन्त गीत गाता है।
सरिता के तट बसते हैं, समभाव शीत भाता है।।
प्रिय माघ बसन्ती बनकर, फागुन की ऋतु लाता है।
निश्चय स्वभाव परिणति को, आनन्द भव्य आता है।।
सम्यक्त्व भावना लेकर, होली आती मदमाती।
चारित्र ज्ञानगंगा की, लहरावलि उर लहराती।।
यह चैत्रमास खेतों में, किलकारी दे दे नचता।
यह साधक उर करुणा से, प्लावित हो शिवपथ रचता।।

वैसाख मास पर्वत पर, मुनिराज बसा करते हैं।
रवि के भीषण तापों को, तप सहित विजय करते हैं।।
है ज्येष्ठ निर्जरा का घर, मुनिवर ने सहज निहारा।
ज्ञायक स्वरूप अवलम्बन ले निज परमार्थ विचारा।।
जर्जरित कर्म हो जाते, टूटते पूर्व के बंधन।
जा एक समय में पाते, शिवपुर का नन्दन कानन।।
ऐसे मुनिराज हमारे, सबको है सविनय वन्दन।
इनके चरणों की रज ही, मेरे मस्तक का चन्दन।।
अति विनयभाव से की है, मुनियों की मैंने पूजन।
इस पूजन का यह फल हो, मैं विचरूँ वन में मुनि बन।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टाविंशतिः मूलगुणसहित-साधुपरमेष्ठिभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महा जयमाला

(वीरछंद)

परम पूज्य परमेष्ठी प्रभु के पद पंकज में करूँ प्रणाम।
निजस्वरूप का निर्णय करके निज को ही ध्याऊँ वसु याम।।
सहज ज्ञान जयवन्त सदा हो सहज दृष्टि हो जय जयवन्त।
हो विशुद्ध चारित्र सहज जयवन्त मुक्ति पथ महिमावन्त।।
पंच परम गुरु पूजन से होते परिणाम विकार विहीन।
होते निज देवत्व भाव के दर्शन भी स्वयमेव प्रवीण।।
वीतराग देवत्व भाव है राग रहित शाश्वत आपूर्ण।
त्रैकालिक ध्रुव ज्ञायक भी है गुण अनन्त वैभव से पूर्ण।।
धन्य धन्य अरहन्त परम गुरु धन्य सिद्ध प्रभु महिमावन्त।
धन्य धन्य आचार्य धन्य हैं उपाध्याय मुनि साधु महन्त।।
धन्य धन्य जीवन्त तीर्थ दिव्यध्वनि जिनवाणी जवन्त।
धन्य धन्य चैतन्यराज की महिमा जग में जय जयवन्त।।

(दोहा)

हुआ पंच परमेष्ठी, यह विधान परिपूर्ण।
मैंने जाना आज प्रभु, मैं भी तुम-सम पूर्ण।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्तसिद्धाचार्योपाध्यायसाधुपरमेष्ठिभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महार्घ्य

(ताटंक)

निज भावों का महार्घ्य ले पाँचों परमेष्ठी ध्याऊँ।
जिनवाणी जिनधर्म शरण पा देव-शास्त्र-गुरु उर लाऊँ।।
तीस चौबीसी बीस जिनेश्वर कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य ध्याऊँ।
सर्व सिद्ध प्रभु पंचमेरु नन्दीश्वर गणधर गुण गाऊँ।।
सोलह कारण दश लक्षण रत्नत्रय नव सुदेव पाऊँ।
चौबीसों जिन भूत भविष्यत वर्तमान जिनवर ध्याऊँ।।
तीन लोक में सर्वबिम्ब जिन वन्दूँ जिनवर गुण गाऊँ।
अविनाशी अनर्घ्य पद पाऊँ शुद्ध आत्मगुण प्रकटाऊँ।।

(दोहा)

महार्घ्य अर्पण करूँ, पूर्ण विनय से देव।
आप कृपा से प्राप्त हो, परम शान्ति स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वपूज्यपदेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तिपाठ

(गीतिका)

सुख-शान्ति पाने के लिए पुरुषार्थ मैंने प्रभु किया।
पंच परमेष्ठी विधान महान प्रभु मैंने किया।।
अब नहीं चिन्ता मुझे है कभी होऊँगा अशान्त।
आज मैंने स्वतः पाया ज्ञान का सागर प्रशान्त।।
विश्व के प्राणी सभी चिर-शान्ति पायें हे प्रभो।
मूलभूत निजात्मा का ज्ञान ही पायें विभो।।

मूल भूल विनष्ट करके नाथ मैं ज्ञानी बनूँ।
भक्ति रत्नत्रय हृदय हो पूर्णत: ध्यानी बनूँ।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(नौ बार णमोकार मंत्र के द्वारा पंचपरमेष्ठी का स्मरण करें।)

क्षमापना पाठ

(दोहा)

भूल-चूक कर दो क्षमा, हे त्रिभुवन के नाथ।
आप कृपा से हे प्रभो, मैं भी बनूँ स्वनाथ।।
अल्प नहीं है हे प्रभो, पूजन विधि का ज्ञान।
अपना सेवक जानकर, क्षमा करो भगवान।।

मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्।।
सर्वमंगलमांगल्यं सर्वकल्याणकारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम्।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

आज हम जिनराज तुम्हारे द्वारे आये।
हाँ जी हाँ हम आये आये।।टेक।।
देखे देव जगत के सारे, एक नहीं मन भाये।
पुण्य-उदय से आज तिहारे, दर्शन कर सुख पाये।।1।।
जन्म-मरण नित करते-करते, काल अनन्त गमाये।
अब तो स्वामी जन्म-मरण का, दुखड़ा सहा न जाये।।2।।
भव-सागर में नाव हमारी, कब से गोता खाये।
तुम ही स्वामी हाथ बढ़ाकर, तारो तो तिर जाये।।3।।
अनुकम्पा हो जाय आपकी, आकुलता मिट जाये।
'पंकज' की प्रभु यही बीनती, चरण-शरण मिल जाये।।4।।